क्या विज्ञान में भारत के पिछड़ेपन का कारण जाति व्यवस्था है

योगेन्द्र यादव

पिछले सप्ताह मेरे एक मित्र भारत में विज्ञान की रिसर्च की शिकायत कर रहे थे। कह रहे थे कि हमारे यहां अधिकांश रिसर्च सिर्फ फाइलों का पेट भरने के लिए की जाती है, प्रोमोशन लेने के लिए की जाती है, उसका हमारे देश की जरूरतों से कोई संबंध नहीं होता। मेरे मित्र स्वयं इंजीनियरिंग में पीएच.डी. हैं, बायो टैक्नोलॉजी की एक बड़ी कम्पनी चलाते हैं। एक विशेष किस्म की मैंब्रेन बनाने में उनकी कम्पनी दुनिया की तीन बड़ी कम्पनियों में से एक है। गांधीवादी परिवार से हैं, और देश सेवा की भावना तथा राष्ट्रीय स्वाभिमान के विचार से ओत-प्रोत है।

इसलिए उन्हें शिकायत का हक भी हैं। उनका कहना था कि कुछ वक्त के लिए भारत के वैज्ञानिकों को विदेश की नकल कर उनकी प्राथमिकताओं के विषयों पर रिसर्च पेपर छापने बंद कर देने चाहिएं और उन्हें कहना चाहिए कि वे भारत की जरूरत के मुताबिक टैक्नोलॉजी बनाएं, कुछ ऐसे आविष्कार करें जो हमारी जरूरत के लिए काम आ सकें। संयोग देखिए कि पिछले ही सप्ताह दुनिया की

प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिका 'नेचर' में भारतीय विज्ञान के एक अनछुए पक्ष पर एक महत्वपूर्ण लेख प्रकाशित हुआ।

अंकुर पालीवाल द्वारा लिखे इस लेख का शीर्षक है 'हाउ इंडियाज कास्ट सिस्टम लिमिट्स डायवर्सटी इन साइंस' (भारत की जाति व्यवस्था कैसे विज्ञान में विविधता को सिकोड़ देती है)। लेख 6 चार्ट के इर्द-गिर्द बुना गया है, जिनमें भारत की वैज्ञानिक शिक्षण एवं शोध संस्थाओं की जातीय बनावट के आंकड़े पेश किए गए हैं। आप ऐसा न सोचें कि यह भारत के विरुद्ध किसी पश्चिमी षड्यंत्र का नतीजा है। सारे आंकड़े भारत सरकार के आधिकारिक स्रोत से लिए गए हैं। यह लेख एक शृंखला का हिस्सा है जिसमें 'नेचर' पत्रिका दुनिया भर के महत्वपूर्ण बड़े देशों में वैज्ञानिकों की सामाजिक पृष्ठभूमि की पड़ताल कर रही है।

इस शृंखला के तहत अमरीका, यूरोप और अन्य देशों के विज्ञान में अश्वेत और अल्पसंख्यकों की कमी का भी खुलासा किया जा चुका है। यह लेख दिखाता है कि हमारी उच्च शैक्षणिक संस्थाओं में दलित आदिवासी और अन्य पिछड़ी जातियों के वैज्ञानिकों की संख्या कितनी कम है। भारत की जनसंख्या में दलित समाज का अनुपात 16.6 प्रतिशत और आदिवासी समाज का 8.6 प्रतिशत है। अगर इसमें पिछड़े वर्ग या ओ.बी.सी. को जोड़ दें तो इन तीनों वंचित वर्गों की कुल जनसंख्या देश की 70 से 75 प्रतिशत के बीच में रहती है।

मतलब यह कि जनरल वर्ग (जिसमें सवर्ण हिंदुओं के अलावा अगड़े मुसलमान, सिख, ईसाई आदि भी शामिल हैं) की जनसंख्या 25 से 30 प्रतिशत से अधिक नहीं है। अब इसके मुकाबले में आप देश की प्रतिष्ठित वैज्ञानिक संस्थाओं की स्थिति देखिए। 'नेचर' पत्रिका का यह लेख दिखाता है कि जैसे-जैसे हम उच्च शिक्षा के पायदान चढ़ते जाते हैं वैसे-वैसे दलित, आदिवासी और पिछड़े समाज की उपस्थिति सिकुड़ती जाती है। कॉलेजों में साइंस और टैक्नोलॉजी से जुड़े सभी कोर्सों (बी.एससी., इंजीनियरिंग या डॉक्टरी आदि) में ओ.बी.सी. के विद्यार्थियों की संख्या उनकी आबादी से थोड़ा ही कम है तो दलित और आदिवासी विद्यार्थियों की संख्या उनकी आबादी से आधी है।

स्नातकोत्तर डिग्री (एम.एससी. और एम.टैक. आदि) में यह अनुपात कुछ और घट जाता है। लेकिन इन डिग्रियों से कुछ काम नहीं बनता। विज्ञान में शोध या अध्यापन के लिए पीएच.डी. जरूरी है। जब देश के सबसे नामी-गिरामी विज्ञान संस्थान (जैसे इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस और सर्वोच्च रैंकिंग वाली आई.आई.टी.) के पीएच.डी. विद्यार्थियों की पृष्ठभूमि देखें तो दलित, आदिवासी और पिछड़ी जातियों सभी का अनुपात जनसंख्या में उनके हिस्से से आधा या उससे भी कम रह जाता है। जनरल यानी अगड़ी जातियों का अनुपात आबादी में उनके हिस्से से दोगुना यानी 60 प्रतिशत से ज्यादा है।

यह विषमता विज्ञान संस्थाओं के प्रोफैसर या वैज्ञानिक के पदों तक पहुंचते-पहुंचते चरम सीमा छू लेती है। इस शोध ने आर.टी.आई. के

जरिए सभी संस्थाओं से जानकारी प्राप्त कर यह पाया कि शीर्ष वैज्ञानिक संस्थाओं की फैकल्टी में 50 प्रतिशत आरक्षण के बावजूद दलित आदिवासी और पिछड़े वर्ग का अनुपात 10 प्रतिशत से भी कम है। कहीं-कहीं लैक्चरार में 10 प्रतिशत से ज्यादा उपस्थिति है लेकिन प्रोफैसर के शीर्ष पद तक पहुंचते हुए दलितों, आदिवासियों और पिछड़ों की संख्या नगण्य हो जाती है।

यही नहीं, विज्ञान की फंडिग की प्रमुख योजनाओं में भी अगड़ी जाति के उम्मीदवारों को 80 प्रतिशत स्थान मिलता है। लेकिन सोचने लायक सवाल यह भी है कि क्या इसका भारत में वैज्ञानिक शोध की गुणवत्ता पर भी असर पड़ता है? अगर समाज में सबसे मेधावी विद्यार्थियों की खोज को समाज के केवल एक तिहाई हिस्से तक सीमित कर दिया जाए तो जाहिर है कि देश बहुत बड़ी मेधा से वंचित हो जाएगा। यही नहीं, जिन्हें आज हम वंचित समाज कहते हैं ये हमारे समाज में तमाम तरह के ज्ञान के स्रोत रहे हैं।